G.S-14

वैदिक वाङ्मय में जलविज्ञान

डॉ. हेमलता बोलिया
सहाचार्य, संस्क त विभाग,
मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय,
उदयपुर (राज.) 313001, भारत

आज विश्व के सम्मुख आतंकवाद ही प्रमुख समस्या नहीं है अपितु पेय जलसंकट, पर्यावरण प्रदू ण, उत्तरोत्तर जलस्तर का नीचे जाना, अव ि ट, ऋतुचक का परिवर्तित होना, ऑजोन परत में छेद, तामापान का बढना आदि समस्याएँ हैं । जिनके कारण न केवल मानव के विनाश का प्रश्न उपस्थित हुआ है अपितु जीव–जगत् के नाश का भी । ये समस्याएँ आज वैज्ञानिकों के लिये चुनौती बन गयी है और उनमें भी पेयजल संकट । हमारे जीवन में जल का कितना महत्त्व है इससे तो हम सब भली–भांति परिचित हैं । हमारे रीर में 2/3 भाग पानी है। यह न केवल हमारा जीवनाधार है अपितु जीवमात्रा एवं वनस्पति जगत् का भी। इसके इसी महत्त्व को ध्यान में रखते हुए ही हमारे ऋ ि–मुनियों ने इसे देवता के रूप में प्रति ठत कर इसकी स्तुति की और इसे धर्म से जोड़ा । जिससे जन–सामान्य इसका महत्त्व समझे और उसका दुरुपयोग न करें परन्तु हमारा दुर्भाग्य यह है कि हमनें आधुनिक होने के चक्कर में अपने ास्त्रीय ज्ञान की उपेक्षा की और इसके महत्त्व को नकारते हुए इसका अविवेकपूर्ण उपयोग ही नहीं किया अपितु इसका मनमाना प्रयोग कर, इसे दू ित भी किया। परिणाम हमारे सामने है कि आज हम नाना रोगों से पीड़ित हो गये है। पेयजल संकट को देखते हुए आज हर नेता का नारा बन गया "जल बचाओ जीवन बचाओ" ; "जल बिन जीवन सूना" कवि की उक्ति भी चरितार्थ हो रही हैं। समाज सुधारक जल योद्वा तैयार करने की बात कर रहे हैं। ऐसी स्थिति में यदि भवि य में जल के लिए युद्व हो तो आश्चर्य नहीं । अतः जल के महत्त्व को पुनः प्रतिपादित करने की आवश्यकता है। ऐसे में हमारा ध्यान ास्त्रीय ज्ञान की ओर जाता है । वैदिक वाङ्मय में जल के महत्त्व के साथ साथ उसका वैज्ञानिक निरूपण किया गया हैं । मन्त्राद भटा ऋ ि धर्मविज्ञ ही नहीं थें। अपितु उनकी द ि ट वैज्ञानिक भी थी । इसीलिए उन्होंने जिन–जिन तत्त्वों का विश्ले ाण किया उनमें जल तत्त्व अपना प्राथमिक स्थान रखता है । यह वसि ठ ऋ ि के इस कथन से ज्ञात होता है–

चनि ट देवा औ ाधीस्वप्सु यद्योग्या अश्नवैथे ऋ ीणाम्।
पुरूणि रत्ना दधतौ न्यस्मै अनुपूर्वाणि चख्यथुर्युगानि ।।[1]

अर्थात् परमात्मा उपेदश करते हैं कि हे याज्ञिक लोगों ! तुम उन ज्ञानी तथा विज्ञानी विद्वानों से प्रार्थना करो कि आप सब प्रकार की विद्याओं में कुशल हो। इसलिये औ ाधियों तथा जलीय विद्या सम्बन्धी ऋ ियों के अभिप्राय को हमारे प्रति कहो और प्राचीन रसायन विद्यावेत्ता विद्वानों ने रत्नादि निधियों को निकाला है, उनका

ज्ञान भी हमें कराओं अर्थात् पदार्थ–विद्या के जानने वाले ऋ ियों के तात्पर्य को समझकर हमें निधिपति बनओं । ज्ञान भी हमें कराओं अर्थात् पदार्थ–विद्या के जानने वाले ऋ ियों के तात्पर्य को समझकर हमें निधिपति बनओं ।[2]

इस प्रकार जल की प्राथमिकता के निरूपण के साथ ही वैदिक वाङ्मय में जल स्वरूप, जलोत्पत्ति , जलनिर्माण विधि (प्रक्रिया) , मेघ से जल प्राप्ति, जल स्रोत, जल प्राप्ति स्थान, व ि ट प्रक्रिया, यज्ञ एवं मंत्रा से जल व ाण विधि, जल के पर्यायवाची नाम एवं गुण, जल के भेद–प्रभेद, जल से स्वास्थ्य लाभ एवं जलीय चिकित्सा विधि, जल का एवं उपयोगिता का सम्यक् एवं सूक्ष्म विवेचन के साथ ही वैज्ञानिक प्रतिपादन किया गया है ।

Vijnana Bharati

जलस्वरूप–

जल ब्द के लिये वैदिक वाङ्मय में मुख्यतः "आप" ाब्द का प्रयोग हुआ है इस के ाताधिक पर्यायवाची नामों [3] का उल्लेख ऋ ायों ने विभिन्न देवाताओं की स्तुति करते हुए किये हैं, जो इसमें विद्यमान गुणों के परिचायक भी हैं । स्वरूप की दृ ट से यह सामन्यतः द्रव रूप है । किन्तु अत्यधिक ीत (तापमान ून्य से सेलसियस से नीचे गिरने) से यह हिम (बर्फ) रूप में परिवर्तित हो जाता है तब यह ठोस भी होता है, इसके अन्य रूप कारका तु ार आदि है । सूर्य की प्रखर किरणों के द्वारा तप्त होने पर यह वा प बनकर मेघ रुप को प्राप्त करता है, तब यह गैस रूप भी होता है । इस प्रकार यह द्रव, ठोस और गैस की दृ ट से त्रिविधात्मक है । इसमें सोम के साथ अग्नितत्व भी विद्यमान है जैसा की "आप": सूक्त में कहा गया है –

अप्सु मे सोमा अब्रवीदन्तविश्वानि भे ाजा ।
अग्नि च विश्वशंभुवमापश्च विश्वभै ाजी ।।[4]

अन्यत्रा भी जल में अग्नि की विद्यमानता की पुि ट की गयी है । यथा "आपः वाग्निर्वा सूर्यो वा गावो वा ध तं वा "। [5]

सबालोपनि ाद् में कहा गया है – " आपो भित्त्वा तेजो भिनत्ति " । [6]

महर्ि ि व्यास ने त्रिविध अग्नि की विद्यमानता का प्रतिपादन करते हुए कहा –

वैद्युत ज्राठरः सौरो ह्यपांगर्भस्त्रायोऽग्नयः ।
तस्मादपः पिबन् सूर्यो गोभिर्दीप्त्यसौ दिवि ।। [7]

अर्थात् जल के गर्भ में रहने वाली (अपांगर्भ) अग्नि तीन प्रकार की होती है (1) वैद्युत (2) जाठर (3) सौर । इसीलिए सूर्य जल का पान करते हुए आकाश में अपनी किरणों से प्रकाशित होता है ।

जल में अग्नि की विद्यमानता को आज वैज्ञानिक भी एक मत से स्वीकार करते हैं। इसी कारण उन्होंने जल से बिजली उत्पन्न की और विद्युदुपकरणों का आवि कार कर हमारे जीवन को सुख –सम ्द्धि से भर दिया । आज अनेक उपकरण बिजली से चलते हैं यह हम सभी जानते हैं । दूसरी बात यह है कि जैसे लोहा–लोहे को काटता है वैसे ही जल में विद्यमान अग्नि से अग्नि ाान्त होती है अन्यथा ऐसा नहीं होता । स्वभाव से जल ीतल है और अहलादकारी है । यह सर्वत्रा व्याप्त है । [8] यह जीव जगत् का जीवनाधार तो है ही साथ ही यह रोग का ामन करने वाला भी है । [9]

जलोत्पत्ति एवं उत्पत्ति स्थान –

जल की उत्पत्ति के प्रश्न का उत्तर स ि ट प्रक्रिया के मूल में अन्तर्निहित है । स ि ट प्रक्रिया के वि ाय में भी भिन्न–भिन्न विचार मिलते हैं । एक मत के अनुसार स ि ट के आदि में जल था । इस आधार पर तो यह सिद्ध होता है कि जल को किसी ने उत्पन्न नहीं किया , वह पहले से ही विद्यमान था । जैसा कि अथर्ववेद के आपः सूक्त में कहा गया है –

आपो अग्रे विश्वमानव गर्भं दधाना अम ता ऋतज्ञा यासु देवी वधिदेव आसीत् ।

(14 / 2 / 6) ऋग्वेद में कहा गया है " आपो वा इदमग्रेसलिलमासीत "।[10]
स ि ट के प्रारम्भ में स्र टा स्वयं ही चारों ओर जल में डूबा उसके भीतर स्थित था । [11] द्वितीय मतानुसार जल उत्पन्न हुआ है । इस मत में यह जिज्ञासा छिपी हुई है कि यह किससे उत्पन्न हुआ ? इस वि ाय में पुनः प थक्–प थक् मत मिलते हैं ।

1. सर्वप्रथम तम था और उसके बाद जल उत्पन्न हुआ । [12]
2 काल से जल की उत्पत्ति हुई । [13]
3 जगत् स्र टा के मन में इच्छा हुई कि मैं आत्मा (मन) से युक्त होऊँ तब उसने अर्चना (पूजन)

करते हुए आचरण किया । उससे "आप" हुआ उससे पूर्व कुछ भी नहीं था सब म त्यु से आव त था ।[14]
4. स ि ट प्रक्रिया का अपना एक क्रम होता है । इस क्रम के भी दो रूप होते हैं एक पूर्व क्रम और द्वितीय पश्चात्

क्रम । प्रथम क्रम जानने का होता है और द्वितीय क्रम प्राप्ति का । पूर्व क्रम के अनुसार स ि ट आकाश, वायु

अग्नि जल प थिवी के क्रम से हुई है । [15] पश्चात् क्रम मानने वालों के अनुसार प थिवी, वायु, आकाश, जल,

तेज, यह उत्पत्ति क्रम है । [16] क्रम की इसी द्विविधता के कारण जल की उत्पत्ति के वि ाय में दो विचार

मिलते हैं ।

1. तेज से जल की उत्पत्ति हुई
2. जल से तेज (अग्नि) की उत्पत्ति हुई

प्रथम मत के अनुसार तेज से जल की उत्पत्ति हुई है। जिसका छान्दोग्योपनि ाद् में सयुक्ति प्रतिपादन किया गया है । जब पुरु ा ोक (संताप) करता है तो उसे पसीने आते हैं। उस समय तेज ही पसीने (जल) का कारण होता है । [17] उच्च रक्त चाप, तीव्र ज्वरादि होने पर रोगी को सर्वाधिक पसीना आता है, उस समय ऐसा प्रतीत होता है मानो ारीर पानी–पानी हो गया । इन सब का कारण वैज्ञानिक नाभिकीय उर्जा (तेज) है। इसीलिए जल की उत्पत्ति तेज से हुई है । [18] इसी का विस्तार विभिन्न दर्शनों में हुआ है वे सृ ि ट का यही क्रम मानते हैं ।

द्वितीय मत –जल से अग्नि की उत्पत्ति हुई है इसका निरूपण यद्यपि जल स्वरूप के प्रसंग में किया जा चुका है तथापि कतिपय उद्धरण प्रस्तुत है :–

सामवेद में ऋ ि ा कहता है "तमायां अग्निं जनयन्त मातरः "[19] अर्थात् जल अग्नि को प्रकट करता है, जल में अग्नि प्रति ि ठत है ।[20] "जल ही अर्क है" [21] और "यह अग्नि अर्क है"। [22] इसीलिये ऋ ि ा बार–बार उपदेश देता हे कि "है सौम्य ! जल रूप ुंग के द्वारा सद्रूप मूल का अनुसन्धान कर" [23] यह अग्नि रूप विराट प्रजापति जल में स्थित है –
स ए ाोऽप्सु प्रति ि ठतो यत्रा क्व चेति तदेव प्रतिति ठत्येवम्। [24]

5. वैज्ञानिको के मतानुसार जल हाइड्रोजन गैस के दो मौलिक्यूल (H_2) और ऑक्सीजन गैस का एक

मौलिक्यूल (ट) के मेल से अर्थात (H_2 व्त्र ूजमत) बनता है वैदिक ऋ ि ा जल निर्माण की इस

विधि से भलीभांति परिचित थे। यह ऋग्वेद के वायु सूक्त के निम्न मंत्रा से ज्ञात होता है जिसमें इसका

विधिवत् निरूपण है –

मित्रां हुवे पूतदक्षं वरुणं च रिशादक्षम् ।
धियां ध ताचीम् साधन्ता ।। [25]

अर्थात् पूत दक्ष = पवित्रा करके जल बढ़ाने वाले, मित्रा हुवे = मित्रा नामक वायु को मैं लेता हू । रिश् अदसं वरुणं च = जंग चढाकर खाने वाले नामक वायु को भी मैं लेता हूँ (ये दोनो) धत अर्ची धियं साधनता = पानी प्रवाहित करने के कर्म की साधना करते हैं। यहाँ जंग करके कौन खाता है, यहाँ यह जिज्ञासा छिपी है । ऑक्सीजन वायु ही जंग करके धातुओं को खाता है जिसे ही वैदिक ऋ ि ा "वरुण" संज्ञा से कहते थे । दूसरा वायु "मित्रा" है । मित्रा का अर्थ पूतदक्षं अर्थात् बल को जानने में समर्थ या भार को बढ़ाने में समर्थ ।

Vijnana Bharati

यह मापन करने वाला –हाइड्रोजन (मित्रा) वायु है, वह पवित्रा बल देता है वैदिक ऋ ि ने इन गैसों के ही क्रमशः वरुण और मित्रा नाम रखे होगें जो मिलकर अन्तरिक्ष में जल का निर्माण करते हैं । ये गैसें " अन्तरिक्ष और "द्यु" में प्रचुर मात्राा में विद्यमान हैं । जहाँ मेघ न हों, वहाँ भी व र्ा कराना इन्हीं दोनों गैसों के समीकरण की सम्भावना से सम्भव है । इसीलिए जल की उत्पत्ति का मुख्य स्थान अन्तरिक्ष और द्यु लोक माने जाते हैं चूंकि वैज्ञानिक इन दोनों गैसों के मेल से प्रयोगशाला में इसका निर्माण करते हैं इसलिए प थ्वीलोक को भी इसका उत्पत्ति स्थान माना जाता है ।

इस प्रकार जलोत्पत्ति के वि ाय में विभिन्न अवधारणाऐं प्रचलित हैं, ये हमे परस्पर भिन्न–भिन्न प्रतीत होती है तथापि इनमें कोई अन्तर्विरोध नहीं है, अपितु ये एक दूसरे की संपो ाक हैं इनमें भिन्नता का दर्शन भी हमें इसलिए होता है कि किससे जल की उत्पत्ति हुई ? जल किससे उत्पन्न हुआ ह तो जल किस में विद्यमान है ? तो जल में कौन विद्यमान है? तो किसी ने जल की उत्पत्ति ही नहीं मानी? तो किसी ने दो गैसों के मेल से उत्पत्ति की व्याख्या की, यह सब द ि टकोण एवं प्रतिपादन की ौली के वैशि ट्य के कारण हुआ ।

जल प्राप्ति स्थान, स्रोत एवं भेद :–

जैसा कि पूर्व में कहा जा चुका है कि जलोत्पत्ति के मुख्य दो स्थान है । परन्तु प्राप्ति की द ि ट से विचार करें तो मुख्य तीन स्थान हैं – (1)अन्तरिक्ष (2) प थ्वी (3) भूमिगत ।[26] अन्तरिक्ष से हमें व ि ट के रूप में जल प्राप्त होता है वही प थिवी पर नदी, सरोवर, समुद्र, आदि से तथा भूमिगत जल कुआ, बावडी, आदि के खनन से स्थान तीन होने पर भी स्रोत अनेक विध हैं। जिन साधनों से हमे जल प्राप्त होता है, वे सभी उसके स्रोत कहे जा सकते हैं प्राप्ति स्थान की भिन्नता के आधार पर अथर्ववेद में प थ्वी स्थानीय जल के त्रिविध भेदों का निरूपण करते हुए भूमिगत जल का अन्तर्भाव उसी में कर दिया जिसके अनुसार (1) धन्वन्य (मरुदेशीय) (2) आनूप्य (कच्छ या दलदल प्रदेशीय), (3) खनिजम (कूप, वापी आदि) है ।[27] अन्तरिक्ष से प्राप्त होने वाला जल दिव्य है । प थ्वी स्थानीय जल को पार्थिव जल और भूमितगत जल को भौमिक जल कहते है ।

मेघ निर्माण विधि –

मेघ निर्माण की द्विविध विधियां हैं – प्राक तिक (स्वाभाविक) और याज्ञिक। प्रथम विधि के अनुसार स ि ट नियम से सूर्य के ताप से प थिवी (समुद्र,नदी आदि) का जल वा प बनकर वायु द्वारा इतस्ततः ले जाया जाता है और वह घनीभूत वा प ही मेघ संज्ञा से अभिहित किया जाता है । जिसका विस्त त निरूपण वैदिक ऋ ि ने इन्द्र, आपः, मरुत, ऋभव, (ऋभु), वरुण, सूर्य, अपां नपातः आदि सूक्तों में किया है । जिसके अनुसार जल का अधिदेवता वरुण समुद्र में निवास करता है और वरुण (आक्सीजन) को सूर्य अपने ताप से वा पीक त कर उसे के कणों को मरुत् की सहायता से अन्तरिक्ष मे ले जाता हैं । वहाँ अन्तरिक्षस्थ मित्रा (हाइड्रोजन) के मेल से एवं अग्नि (विद्युत) के सहयोग से मेघ का निर्माण होता है ।[28]

द्वितीय याज्ञिक विधि में यज्ञ से प्रज्ज्वलित अग्नि में घ त आदि की आहुति से वातावरण उ ण होता है हल्की वायु ऊपर उठती है जल स्रोतों तक पहुंच कर वा पीकरण करती है और वा पीक त जल अन्तरिक्ष में पहुंचता है वहाँ घ तादि की आहुति से घनीभूत होकर मेघ के रूप में परिवर्तित होता है सुगंधित द्रव्यों से युक्त वा प ऊपर जाकर केन्द्रक (छनबसबने) का काम करती है जिससे अन्तरिक्ष में स्थित वा प प्रचुरता से उसमें आ मिलती है , वा प और वा प एकत्रित करती है इस प्रकार मेघ निर्माण की प्रक्रिया पूरी होती है।[29] यज्ञ में प्रयुक्त सोम अपों में गर्भ उत्पन्न करता है पवमान इन्द्र मेघ ओज धारण करता है चन्द्रमा (सोम) सूर्य में ज्योति (विद्युत) उत्पन्न करता है सामवेद के इस साम में यज्ञ से मेघ निर्माण की इस प्रक्रिया को समझाया गया है।

"महत्त्व सोमो महि ाश्चकारायां यद्गर्भोऽव णीत देवान् "।
अदधादिन्द्रे पवमान ओजोऽजनयत्सूर्ये ज्योतिरिन्दु : ।।[30]

व ि टप्रक्रिया :– मेघ निर्माणवत् व ि ट प्रक्रिया भी दो प्रकार की है – स्वाभाविक और याक प्रक्रिया।

1. स्वाभाविक प्रक्रिया में इन्द्र व ि ट का अधि ादेवता है इसके 14 भेदो मे से विद्युत् इन्द्र नामक त तीय भेद व ि ट प्रक्रिया का प्रारंभ करता है घनीभूत मेघ में जब णािात्मक और घनात्मक विद्युत् का आवेश होकर बिजली चमकती है बादल टकराते है तो व ि ट होती है अथर्ववेद के मंत्रों में कहा है मेघ से व ि ट तभी होगी जब वायु जलों को आकाश में लेकर उडे, गर्जना करता हुआ भूमि को जलों से भर दे।[31] दशो दिशाओं में बिजली चमके हवायें चले[32] और मरुतों से गिराये गये मेघ व ि ट से प थ्वी पर आये । मरुद्गणों का ज्योति से संबंध विद्युत् के कारण ही है जब मरुद्गण प थ्वी पर जल व र्ा करते है तो विद्युत् प थ्वी की और मुस्कराती है।[33] और व ि ट को प थ्वी की ओर प्रेरित करती है ।[34] इसका रथ विद्युन्मय है जिसके चक्र स्वर्ण निर्मित हैं, इसमें जल की व र्ा करने वाले कोश (जलपात्रा) रखे है।[35] इसी कारण उसे इन्द्र का सहायक माना गया है।[36] इस प्रक्रिया में सूर्य का भी अपना योगदान है सूर्य मेघ का भेदन कर प थ्वी पर जल व ि ट करता है जिससे प थ्वी पर बड़े जलाशय बनते है ।[37]

याज्ञीक व ि ट प्रक्रिया :–

यज्ञ द्वारा व ि ट दो स्थिति में हो सकती है (1) आकाश में मेघ हो तो यज्ञ धूम द्वारा उन्हें वाि छत स्थान पर बरसाया जा सकता है। (2) यदि मेघ नहीं हो तो प्रथम यज्ञ द्वारा निर्माण करना होगा, अनन्तर उनसे जल व ि ट करायी जा सकती या उससे जल प्राप्त होगा। यज्ञ से व ि ट कराने की आवश्यकता तभी होती है जब देश में अकाल की स्थिति हो या व ार्ों से व र्ा नहीं हुई हो ,जन सामान्य जल के लिए त्राहि–त्राहि करने लगे इसी को द ि टगत रखते हुए वैदिक ऋ ि ने समाधान में वेद के रा ट्रगान में कहा –

" निकामे निकामे नः पर्जन्यो अभिव ातु "[38]

अर्थात जैसे –जैसे कामना और अनु ठान किये जायें, तो व र्ा करायी जा सकती है । व ि ट हेतु जलीय, देवता वरुण, इन्द्रादि के साथ आपः पर्जन्य, मरुत, अग्नि, सूर्य से भी प्रार्थना की जाती है यज्ञ अधिक व्यय साध्य है। इसके लिए मानसिक इच्छा ाक्ति (संकल्प ाक्ति), वाचिक (ध्वनि) ाक्ति और आहुति पदार्थ ाक्ति तीनों की आवश्यकता होती है। त्रिविध ाक्तियों के साथ यज्ञ में दी गई आहुति से उ ण वायु अन्तरिक्ष में जाकर कूप खनन करती है अर्थात् गोल छेद बनता है जिससे जल नीचे धरती पर व र्ा के रूप में आता है।[39] वहीं विद्यमान मित्रा और वरुण (हाइड्रोजन और आक्सीजन) का मेल करता है । इस प्रक्रिया में अग्नि प्रदत्त ताप माध्यम का काम करता है तथा जो प थिवी स्थित (समुद्रादि) का जल सूर्य की किरणों से छिन्न–भिन्न अर्थात् कण–कण हुआ ऊपर जिस अनुपात में जाता है उतना ही पुनः धरती पर व ि ट करता है।[40] जिसका वैदिक वाङ्मय में स्थान –स्थान पर निरूपण है।[41]

आज परीक्षण का युग है अतः यज्ञ द्वारा व ि ट के अनेक बार विभिन्न स्थानों पर प्रयोग भी किये गये और जो सफल भी हुए है, उनमें एक प्रयोग उदयपुर में राजस्थान विद्यापीठ के संघटक संस्थान, साहित्य संस्थान के पूर्व अध्यक्ष परमज्योतिर्विद् एवं कर्मकाण्डी पं. उमाशंकर ुक्ल ने

Vijnana Bharati

जून 1973 में जगत्प्रसिद्ध पिछोला झील के गणगौर घाट पर किया था। जिसके परिणामस्वरूप प्रभूत व र्षा ही नहीं हुई अपितु जल प्लावन (बाड) भी आई। यह समाचार तात्कालिक गजट में भी प्रकाशित हुआ। पं. उमाशंकर जी ने "इन्द्रयज्ञ" किया था जिसमें सर्वप्रथम शिववास देखा जाता है (शुक्ल पक्ष की तिथि को दो से गुणा करने पर = 1,2,3, में से कोई भी अंक आये तो उस दिन यज्ञ प्रारम्भ करना चाहिए।[42] इससे शीघ्र फल प्राप्ति होती है। तदनन्तर काली मिट्टी का शिवलिंग बनाकर उस पर घ त (घी) का लेप करना चाहिए और उसे इस प्रकार स्थापित करें कि वह अभि षेक जल से क्षत न हो हवन के लिये चतुरस्र वेदी बनानी चाहिये हवन करते समय वह्निवास भी देखना चाहिए जलीय नक्षत्रा में यज्ञ करना चाहिये। इन्द्र और वरुण देवता के जप करें, रुद्रा टाध्यायी और सप्तशती के 11 गुणा 11 पाठ निम्न मंत्रा से सम्पुटित करने चाहिये –

महाँ2।। इन्द्रो य ऽओजसा पर्जन्यो व ि टमान् 3 इव स्तोमैर्वत्सस्य वाव ध ेः ।।

उपयाम ग हीतोऽसि महेन्द्राय त्वैस ते योनिम्महेन्द्रायत्वां ।।

शुक्लयजुर्वेद, 8/40

साथ ही जल गायन्त्री के जप भी करे (करवाये) जिसका मंत्रा निम्न है :–

"जल बिम्बाय विद्महे । मीनपुरु षाय धीमहि । तन्नो अम्बु प्रचोदयात्"

जप के दशमांश के रूप में आहुतियां देनी चाहिये तत्पश्चात् दक्षिणा देनी चाहिए इन्द्रयज्ञ की उपर्युक्त विधि उनसे साक्षात्कार कर ज्ञात की, उनके ही शब्दों में यह यज्ञ एक लाख रूपयों से उस समय सम्पन्न हुआ था। इसलिए यह यज्ञ जन सामान्य की भागीदारी एवं सर्वकार (राज्य सरकार) के सहयोग के बिना सम्पन्न नही हो सकता है।

इसके अतिरिक्त अन्य मंत्रों के विनियोग से भी व ि ट हेतु यज्ञ के प्रयोग होते रहे है यजुर्वेद के निम्न मन्त्रों से भी ऐसे प्रयोग किये जा सकते है :–

"असौ यस्ताम्रो तथा असौ योऽवसूर्यति"43

इसमें साधक केवल जल का ही आहार लेता हुआ और गुड और दूध में वेतस की समधिओं को भिगोकर हवन करे, तो सूर्य प्रसन्न होकर जल बरसाता है।

इस प्रकार वेद प्रथम द ि टया तो विविध देवी–देवताओं की स्तुति मात्रा प्रतीत होते हैं फिर भी इनमें तत्कालीन ऋ ि यों की ऋतंभरा प्रज्ञा का सारभूत वैज्ञानिक ज्ञान भरा पड़ा है। आवश्यकता उन सबको समझकर भली भांति प्रयोग करने की है ।

सन्दर्भ सूची :–

1. ऋग्वेद, 7/70/04
2. वही द्र टव्य दयानन्द भा य
3. त निघन्टु, देवराज यज्वा टीका, अध्ययन–1, प .113–15
4. ऋग्वेद 1/23/20
5. ऋग्वेद देवतानुक्रमाणिका, 4/58
6. 11/2
7. वेद विद्यानिदर्शन – भगवत्त , प . 83
8. (क) पयः प थिव्याम्पयऽओ ाधी ु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधा पयस्वती प्रदिशः सन्तु मह्यम् ।। यजुर्वेद 18/36
(ख) स इमॉल्लोकास जत । अम्भो मरीचीर्मरमापेऽन्तरिक्षं मरीचीर्मरमापेऽदो ऽ दोऽम्भः परेण
दिवं द्यौः प्रति ठाऽन्तरिक्षं मरीचयः प थिवी मरो या अधस्तात्ता आपः। ऐतरेयोपनि द, 1/2
9. आपो अग्रं दिव्या औ ाधयः । तास्ते यक्ष्ममेनस्य मंगादगांदनीनशन् 1
अर्थववेद 8/7/3 ; 6/9/13; 1/25/1
10. अ टक 1, अध्याय –1 अनुवाक 3, वही 7/1/5
11 सा वरीवर्ति भुवनेस्वन्तरोपसानः क उतच्चिकेत । अथर्ववेद 10/2/7
12 तम असीत्तमसा गूळहमग्रेऽप्रकेतं सलिलं सर्वमा इदम् । नासदीयसूक्त, 10/129/3
13 कालादापः समभवन् । अथर्ववेद 19/54/1
14 नैवेह किच्चनाग्र असीनम त्युनैवेदमाव तमासीत् । अशनाययाशनाय हि म त्युस्तन्मनोऽ कुरुतात्मन्वी स्यामिति । सोऽ र्चन्नचरत्तस्यार्चत आपोऽ जायन्तार्चते वे मे कममूदिति
ब हदारण्यकोपनि द, 1/2/1
15. आकाशद्वायुः । वायोरग्नि : अग्नेरापः । अद्भ्यः : प थिवी । तैत्तिरीयोपनि द, 2/1/1 भ
16 (क) ए ा ब्रह्मै ा इन्द्र ए ा प्रजापतिरेते सर्वे देवा इमानि च प चमहाभूतानि । प थिवी वायुराकाश आपो ज्योति ीत्येतानीमानि च क्षुद्रामिश्राणीव । ऐतरेयोपनि द, 3/3
(ख) प थिवीं च वायु चाकाशं चापश्च तेजश्च ।
छान्दोग्योपनि द, 7/2/1
17 तस्मायत्र क्व च ोचति स्वेदते वा पुरु स्तेजस एवतदध्यापो जायन्ते। वही; 6/10/3
18. (क) तदैक्षत बहुस्यां प्रजाययेतितत्तेजो स जत । तत्तेज ऐक्षत बहुस्यां प्र जाये येति तदपोऽस जत
। वही,
(ख) ज्योति ायपः । तैत्तिरीयोपनि द 2/1/1
19. खण्ड –6 अध्याय 20/1
20 ये अग्नयो अप्सु कृकृकृकृकृकृकृकृकृ। अथर्ववद 3/21/1
21. आपो व अर्कस्तद्यदपा कृकृकृकृकृकृकृकृकृकृकृ। ब हदारण्यकोपनि द ; 1/2/2
22 अयग्निरर्कः 1/2/2 वही.
23 कृकृकृकृकृकृकृकृकृकृकृकृकृसोम्यान्नेव शुङ्गेनाओ मूलमन्विच्छभ्दिः सोम्य शुङ्गेन तेजो मूलमान्विच्छ तेजसा सोम्य शुङ्गेन सन्मूलमान्विच्छ। छान्दोग्योपनि द 6/8/4
24. ब हदारण्यकोपनि द 1/2/3
25 ऋग्वेद, 1/2/7
26 या आपो दिव्या उत्त वा स्रवन्ति खनित्रिमा उतकृकृकृकृकृकृकृकृ। ऋग्वेद 7/49/2
27. शंन आपो धन्वन्या शंभु सन्तवनूप्याः । शंनः खनित्रिमा आपः । अर्थवेद, 1/6/4
28 (क) उर्ध्व भानु सविता देवा अश्वेदद्रप्सं दविध्वद्गवि ो न सत्वा । अनु व्रत वरुणो यान्ति मित्रा यत्सूर्य दिव्यारोहन्ति ।। ऋग्वेद , 4/2/13/12/2
(ख) अपः समुद्रात् दिवमुदवहन्ति दिवस्प थिवीमभि ये स जन्ति ।
अर्थववेद,5/58/3,
4/15/6, 4 15/16, 4/27/2
(ग) दिवा यान्ति मरुतो भूम्याग्निरयं वातो अन्तरिक्षेण याति । अदिभर्याति वरुण समुद्रैय ामाँ इच्छतः
िवसो नपातः । ऋग्वेद 1/161/14
(घ) असूर्या उप सर्येयाभिर्वा सूर्यः सह ता नो हिन्वन्त्वध्वरम् । वही । /23/17
(च) आप देवीरूप ह्वाये यज्ञ गावः पिबन्ति नः । सिन्धुभ्यः कर्त्वं हविः। वही 1/23/18
29. आयाहि सोम पीतये स्वाहों देव नियुत्वता। यजुर्वेद 27/30
(ख) अद्रिरसि वानस्पत्यः वही, 1/14; 28 ; 20

Vijnana Bharati

(ग) देवो देवैर्वनस्पतिर्हिरण्यपर्णो मधुशाखा सुपिप्पलो देवमिन्दुमवर्धयत। वही , 28/20

30 सामवेद ,1186

31 (क) उदीरयत मरुतः समद्रात् । अथर्ववेद 4/15/5

(ख) अभिक्रन्द्र स्तनयार्द्रयोद भूर्मि पर्यन्यपयसा समड्न्धि । कृकृकृकृ वही 4/15/6

32 आशामाशां विद्योततां वाता वान्तु दशोदिशः । कृकृकृकृकृकृकृकृकृ कृकृवही 4 /15/8

33 अव स्मयन्त मरुतः प थिव्यां यदि ध तं मरुतः प्र णुवन्ति । कृकृकृकृ कृकृकृकृवही, 4/168/8

34 व ि ट मे विश्वे मरुतो जुनन्ति । ऋग्वेद, 5/58/3

35 चोतन्ति कोशा उप वा रथे वा । ऋग्वेद 1/87/2

36 वही, 3/35/9

37 ये उद्नः फलिगं भिनन्न्य विसन्धुं रवास जत् ।
यो गो ु पक्वं धारयत् ।। वही , 8/32/25

38. यजुर्वेद , 22/22

39. मरुद्भिप्रच्युता मेघा व र्न्ति प थिवीमनु । अथर्ववेद, 4/15/7

40. ऋग्वेद, 10/30/1–11; यजुर्वेद 23/48 ; 1/25; 2/22; 14/8; 7/16/; 2/25; 7/25; सामवेद 1186, अथर्ववेद, 14/1/37

41 छान्दग्योपनि ाद्, 5/5

42 एक संख्या का अर्थ शिव का वास कैलाश पर, दो संख्या का अर्थ शिव – पार्वती के साथ में हैं और तीन संख्या का अर्थ शिव नान्दी पर सवार प्रस्थान के लिए उद्यत हैं, ये तीनो ुभ हैं, चार संख्या का अर्थ शिव का वास मशान मे है जो ुभ नहीं है ।

43 ुक्ल यजुर्वेद 16/6/7

Vijnana Bharati